माननीय आर.एल.आनंद के समक्ष,

सोम प्रकाश, याचिकाकर्ता
बनाम

संतोष रानी और अन्य - उत्तरदाता

1996 का सीआर नंबर 2503

24 जुलाई, 1996

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 151- आदेश 21 नियम 35,97 - डिक्री के निष्पादन पर आपत्तियां

दायर - ऐसी आपत्तियों का अधिनिर्णयन - अधिनिर्णय का अर्थ।

अभिनिर्धारित किया कि न्याय निर्णयन का अर्थ यह नहीं है कि निष्पादन न्यायालय के लिए मुद्दों को तैयार करना हमेशा आवश्यक होता है। यदि आक्षेपकर्ता द्वारा अपनी आपत्ति याचिका में उठाई गई दलीलों पर निष्पादन न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा प्रथम दृष्टया विचार किया गया है, तो मेरी राय में, यह दोनों न्यायालयों की ओर से विवेक का उचित अनुप्रयोग है, जिसके लिए आक्षेपकर्ता को कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए।यह मामला नहीं है कि आक्षेपकर्ता की आपत्तियों को सीधे फेंक दिया गया था, बल्कि मामले में पारित 9 अप्रैल, 1996 का विवादित आदेश इंगित करता है कि आक्षेपकर्ता के सभी संभावित स्टैंड पर विधिवत विचार किया गया था और उसके बाद अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंची कि आपत्तियों का कोई बल नहीं था। निष्पादन करने वाला कोरूत इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि आक्षेपकर्ता दीवानी मुकदमा दायर करके अपने अधिकार के संरक्षण के लिए पहले ही अपने उपायों को समाप्त कर चुका था और उसका दावा उच्च न्यायालय तक भी स्वीकार नहीं किया गया था, इसलिए, यह नहीं माना जा सकता था कि आक्षेपकर्ता को नहीं सुना गया था या वह तब स्वतंत्र रूप से अपने अवैध कब्जे की रक्षा करने का हकदार था। एक नया अध्याय खोलने से, जैसा कि आक्षेपकर्ता द्वारा घोषित किया गया है, उन सभी वैध आदेशों को रद्द करने का अर्थ होगा, जिन्हें न्यायालय द्वारा घोषित किया गया था। 'न्यायनिर्णयन' शब्द को संक्षेप में प्रस्तुत करने के लिए, जैसा कि नियमों में उपयोग किया गया है, मुद्दों को तैयार करने के साथ शुरू और समाप्त नहीं होता है, लेकिन इसके लिए आपत्तिकर्ता के मामले और ऐसी आपत्तियों के समर्थन में दस्तावेजों की सराहना की आवश्यकता होती है।

आशुतोष मोहनता, याचिकाकर्ता के वकील।

सी.एम. मुंझाल, प्रतिवादी के लिए वकील।

निर्णय

(1) सोम प्रकाश, पुत्र लाई चंद, निवासी सिरसा, तहसील और जिला सिरसा, वर्तमान सिविल संशोधन दायर किया और यह किया गया हैअतिरिक्त जिला न्यायाधीश, सिरसा की अदालत द्वारा 8 जून, 1996 को पारित आदेश के विरुद्ध निर्देश दिया गया, जिसने

सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग) सिरसा द्वारा 9 अप्रैल, 1996 को पारित आदेश की पुष्टि की, जिसने 22 जुलाई, 1994 के निष्कासन आदेश पर सोम प्रकाश की आपत्तियों को खारिज कर दिया और डिक्री धारक के आवेदन की अनुमति दी और आपत्ति करने वाले सोम प्रकाश को डिक्री धारक श्रीमती को दुकान का खाली कब्जा सौंपने का निर्देश दिया गया। संतोष रानी 10 दिनों की अवधि के भीतर अपनी कीमत और जिम्मेदारी पर ऐसा नहीं करने पर कानून अपना काम करेगा।

(2) इससे पहले कि यह अदालत पार्टियों के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए प्रस्तुतियों से निपटे, पार्टियों के बीच विवाद की सराहना करने के लिए कुछ तथ्य आवश्यक हैं। डिक्री धारक श्रीमती संतोष रानी ने अपने किरायेदार सुनील कुमार के खिलाफ एक निष्कासन याचिका दायर की और उनकी याचिका पर अंततः लगभग चार साल के अंतराल के बाद 22 जुलाई, 1994 को फैसला किया गया और सुनील कुमार के खिलाफ एक निष्कासन आदेश पारित किया गया, जिन्होंने निष्कासन आदेश के खिलाफ किराया अपील को प्राथमिकता दी, जिसे 17 जुलाई को खारिज कर दिया गया। 22 जुलाई, 1994 को बेदखली आदेश पारित होने के बाद मूल किरायेदार सुनील कुमार ने दुकान का कब्जा सोम प्रकाश आपत्तिकर्ता को दे दिया। 17 जुलाई, 1995 को अपील में सुनील कुमार, मूल किरायेदार का बयान दर्ज किया गया था और सुनील कुमार ने अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष कहा था कि सिरसा निवासी लाल चंद के सोम प्रकाश सोनी ने किराया अपील दायर करने के बाद उससे अवैध रूप से और जबरन दुकान पर कब्जा कर लिया था और अब वह विवादित दुकान के कब्जे में है और इस कारण से वह नहीं चाहता था। 22 जुलाई, 1994 के निर्णय के खिलाफ उनकी अपील पर मुकदमा चलाया जाए और इसलिए, उनकी अपील को वापस लिया गया मानते हुए खारिज कर दिया जाए। सुनील कुमार के निर्णय देनदार के इस बयान पर अपीलीय प्राधिकारी द्वारा 17 जुलाई, 1995 को अपील खारिज कर दी गई थी। यह डिक्री धारक का मामला है कि इस तरह से सोम प्रकाश ने निष्कासन आदेश पारित होने के बाद और किराया अपील भरने के बाद अवैध और जबरन तरीके से दुकान पर कब्जा कर लिया, जिसे 12, 16 अगस्त, 1994 को भरा गया था। सोम प्रकाश ने आपत्तियां भरीं कि वह अपने व्यक्तिगत अधिकार में दुकान पर कब्जा कर रहे थे; वह दुकान के मूल मालिक का किरायेदार है और इसलिए, उसके कब्जे की रक्षा की जानी चाहिए। सोम प्रकाश का मामला यह है कि दुकान का मालिक चरथ सिंह पुत्र किशन, सिंह था, जिसने 1 नवंबर, 1980 के किराया नोट के माध्यम से 400 रुपये के मासिक किराये पर उसे यह दुकान दी थी और उसके बाद 1 फरवरी, 1 फरवरी से किराया बढ़ाकर 750 रुपये प्रति माह कर दिया गया था। 1984 और तब से वह किरायेदार के रूप में विवाद में दुकान के कब्जे में है और कानून के अनुसार उसे किसी भी समय

~~वहां से कभी नहीं निकाला गया था। वास्तव में, डिक्री-धारक श्रीमती संतोष रानी सुनील~~ कुमार जजमेंट देनदार की असली बहन है। दोनों ने एक-दूसरे के साथ मिलीभगत की

थी और उन्हें एक पक्ष के रूप में शामिल किए बिना इस तुच्छ निष्कासन याचिका को भरकर 22 जुलाई, 1994 को निष्कासन आदेश प्राप्त करने में कामयाब रहे।

(3) डिक्री-धारक का रुख यह है कि सोम प्रकाश का कब्जा अवैध है और इसलिए, उसे 22 जुलाई, 1994 के निष्कासन आदेश के अनुसरण में बेदखल किया जाना चाहिए, जो पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम के तहत लागू है।

(4) सोम प्रकाश ने एक दीवानी मुकदमा भी दायर किया कि उन्हें अवैध रूप से और जबरन दुकान से बेदखल नहीं किया जाए; यह स्थायी निषेधाज्ञा की परिणामी राहत के साथ घोषणा के लिए एक मुकदमा था, जो डिक्री-धारक श्रीमती संतोष रानी के खिलाफ दायर किया गया था। उन्होंने आदेश 39 नियम 1 और 2, सीपीसी के तहत एक आवेदन भी दायर किया, जिसमें प्रार्थना की गई कि मुकदमे के लंबित रहने के दौरान उन्हें मृत परिसर से बेदखल नहीं किया जाए। आपत्तिकर्ता सोम प्रकाश ने इससे पहले 1 अप्रैल, 1995 को सिविल कोर्ट से उनके द्वारा दायर मुकदमे में स्थगन आदेश प्राप्त किया था। डिक्री धारक श्रीमती संतोष रानी ने स्थगन हटाने के लिए एक आवेदन दायर किया लेकिन 1 अप्रैल, 1995 के उक्त आदेश की पुष्टि 20 सितंबर, 1995 को की गई। संतोष रानी ने दिनांक 20 सितम्बर, 1995 के आदेश के विरुद्ध आदेश 43, सी पी सी के अंतर्गत 27 सितम्बर, 1995 को अपील दायर की और इस अपील का निपटान 20 नवम्बर, 1995 को अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, सिरसा की अदालत द्वारा कर दिया गया, जिन्होंने डिक्री धारक की अपील स्वीकार कर ली और दिनांक 20 सितम्बर, 1995 के आदेश को निरस्त कर दिया गया। इस तरह आदेश 39, नियम 1 और 2 सीपीसी के तहत सोम प्रकाश के आवेदन को खारिज कर दिया गया। सिरसा के अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने कहा कि सोम प्रकाश का कब्जा 1

नवंबर, 1980 से किरायेदार के रूप में नहीं था, जैसा कि उन्होंने दावा किया था। दूसरी ओर सोम प्रकाश ने 22 जुलाई, 1994 को निष्कासन आदेश पारित होने के बाद दुकान में प्रवेश किया और इसलिए वह सुनील कुमार के खिलाफ पारित निष्कासन आदेश

के निष्पादन में निकाले जाने के लिए उत्तरदायी है, क्योंकि सोम प्रकाश का कब्जा सुनील कुमार के पास था। दूसरे शब्दों में, अपीलीय न्यायालय द्वारा यह माना गया था कि सोम प्रकाश को मूल किरायेदार निर्णय देनदार के साथ मृत परिसर से जाना चाहिए। सिरसा के अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 20 नवंबर, 1995 के आदेश के विरुद्ध सोम प्रकाश आपत्तिकर्ता ने उच्च न्यायालय में सिविल पुनरीक्षण संख्या 4335-एम 1955 दायर किया, जिसने प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित 20 नवंबर, 1995 के आदेश की पुष्टि करते हुए कहा कि उक्त आदेश में हस्तक्षेप का कोई आधार नहीं है। इस तरह से दिनांक 20 नवम्बर, 1995 के आदेश को अंतिम रूप दिया गया। दिनांक 22 नवम्बर, 1995 के निर्णय के पैरा नं 19 के तहत यह संकेत दिया गया था कि प्रतिवादी संख्या 2 सुनील कुमार अपनी बहन संतोष रानी के बीच मुकदमेबाजी के कारण ठीक नहीं चल रहा था और इस कारण से उसने जानबूझकर डिक्री धारक श्रीमती संतोष रानी के हितों को नुकसान पहुंचाने के लिए वादी सोम प्रकाश को विवादित दुकान का कब्जा दे दिया। ये था; यह भी माना कि श्रीमती संतोष रानी और सुनील कुमार के बीच कोई मिलीभगत नहीं थी, बल्कि सुनील कुमार और सोम प्रकाश ने श्रीमती संतोष रानी को नुकसान पहुंचाने के लिए हाथ मिलाया था। यह भी कहा जा सकता है aकि आपत्तिकर्ता सोम प्रकाश द्वारा घोषणा और निषेधाज्ञा के लिए भरा गया सिविल मुकदमा अभी भी सिविल कोर्ट में लंबित है। अंतरिम राहत के मामले में सोम प्रकाश पहले ही उच्च न्यायालय में हार चुके थे। सोम प्रकाश की आपत्तियों को खारिज करते हुए, निष्पादन न्यायालय द्वारा यह टिप्पणी की गई थी कि वह इस दृढ़ निष्कर्ष पर पहुंचा था कि 22 जुलाई, 1994 के निष्कासन आदेश के अनुसरण में आपत्तिकर्ता को भी बेदखल किया जा सकता है और उसके कब्जे की रक्षा नहीं की जा सकती है, भले ही वह निष्कासन कार्यवाही में पक्षकार न हो। दिनांक 9 मई, 1995 के इस आदेश के विरुद्ध आपत्तिकर्ता सोम

प्रकाश ने अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, सिरसा की अदालत में अपील दायर की, जिन्होंने दिनांक 8 जून, 1996 के आक्षेपित आदेश के तहत यह सुविचारित राय दी कि निष्पादन न्यायालय द्वारा आपत्तियों पर विचार करना आवश्यक रूप से शामिल नहीं है और न ही इसने निष्पादन न्यायालय को मुद्दों को तैयार करने और साक्ष्य रिकॉर्ड करने का अधिदेश दिया है। यदि वे आपत्तियां प्रथम दृष्टया मेरिट के बिना थीं। यह भी माना गया कि यदि निष्पादन न्यायालय पाता है कि निर्णय देनदार की आपत्तियां तुच्छ हैं, तो मुद्दों को तैयार करने और साक्ष्य दर्ज करने का कोई फायदा नहीं होगा। यह भी देखा गया कि सोम प्रकाश की आपत्तियां मुकदमेबाजी को लंबा खींचने की प्रकृति में अधिक थीं ताकि डिक्री धारक डिक्री के फल प्राप्त करने में सक्षम न हो। आपत्तिकर्ता के पक्ष में इस तरह के पाठ्यक्रम का मतलब उसे अवैध लाभ देना होगा। दिनांक 8 जून, 1996 के आक्षेपित आदेश से यह भी स्पष्ट है कि अतिरिक्त जिला न्यायाधीश की अदालत ने इस बात पर विचार किया कि दस्तावेजी प्रस्तावित साक्ष्य, जिसे आपत्तिकर्ता सोम प्रकाश द्वारा प्रस्तुत करने की मांग की गई थी, और उसी पर विचार करने के बाद निचली अपीलीय अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंची कि आपत्तिकर्ता के पास निष्कासन आदेश का सफलतापूर्वक विरोध करने का कोई मामला नहीं था और अंततः अपील में कोई दम नहीं मिला। इसे खारिज कर दिया गया।

(5) 8 जून, 1996 के आदेश से व्यथित सोम प्रकाश द्वारा वर्तमान पुनरीक्षण याचिका दायर की गई है, जिसे याचिकाकर्ता की ओर से पेश हुए श्री आशुतोष मोहनता और प्रतिवादियों की ओर से पेश हुए वकील श्री सीएम मुंझल की मदद से निपटाया जा रहा है, और उनकी सहायता से मैंने इस मामले के रिकॉर्ड का अध्ययन किया।

(6) मैंने पहले ही मामले के कुछ तथ्यों को पुन प्रस्तुत कर दिया है और पुनरावृत्ति की कीमत पर यह स्पष्ट हो जाएगा कि 22 जुलाई, 1994 के निष्कासन आदेश के पारित होने के बाद आपत्तिकर्ता सोम प्रकाश ने एक दीवानी मुकदमा दायर किया और आदेश 39, नियम 11 और 2, सी.पी.सी. के तहत एक आवेदन भी दायर किया। एक स्तर पर उनके आवेदन को ट्रायल कोर्ट द्वारा स्वीकार कर लिया गया था, लेकिन प्रथम अपीलीय अदालत ने खारिज कर दिया था। और फिर

~~उच्च न्यायालय द्वारा। एक मोर्चे पर अपनी लड़ाई हारकर आपत्तिकर्ता~~ सोम प्रकाश ने फिर से निष्पादन में आपत्तियां दर्ज की अदालत ने 22 जुलाई, 1994 के निष्कासन आदेश का सफलतापूर्वक विरोध करते हुए इस दलील पर कि वह 1980 से मृत परिसर में किरायेदार है और निष्कासन आदेश श्रीमती संतोष रानी ने अपने भाई सुनील कुमार के साथ मिलकर प्राप्त किया है। इस न्यायालय ने पहले ही ऊपर उल्लेख किया है कि निष्कासन आदेश चार साल के अंतराल

के बाद पारित किया गया था, जो प्रथम दृष्टया यह बताता है कि 22 जुलाई, 1994 का निष्कासन आदेश एक सामूहिक तरीके से नहीं बल्कि एक गर्म प्रतियोगिता के बाद पारित किया गया था और इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि डिक्री के फल को हराने और देरी करने के लिए सुनील कुमार ने किसी तीसरे व्यक्ति को कब्जा दे दिया होगा ताकि श्रीमती संतोष हो सकता है कि निकट भविष्य में रानी को संपत्ति पर कब्जा न मिल पाए। जो भी हो, इस न्यायालय को कानूनी दृष्टिकोण से इस संशोधन से निपटना होगा।

(7)याचिकाकर्ता के वकील द्वारा उठाया गया तर्क यह था कि निष्पादन न्यायालय याचिकाकर्ता की आपत्तियों को सरसरी तौर पर खारिज नहीं कर सकता है, लेकिन वह आपत्तिकर्ता द्वारा अपनी आपत्तियों में उठाए गए विवाद पर फैसला करने के लिए बाध्य है और उठाए गए विवाद को केवल मुद्दों को तैयार करके और आपत्तिकर्ता को उसके कथनों/ आपत्तियों के समर्थन में प्रमुख साक्ष्य के लिए उचित अवसर देकर निपटाया जा सकता है कि उसे किरायेदार के रूप में शामिल किया गया था। दुकान में मूल मालिक चरथ सिंह द्वारा एक किराए के नोट के नीचे पूछताछ की जाती है। मुद्दों को तैयार नहीं करने और निष्पादन न्यायालय द्वारा विवाद का निर्णय न करने से पेटेंट अवैधता पैदा हो गई थी, जिसे संशोधन में ठीक किया जाना चाहिए। श्री मोहनता ने आगे कहा कि यहां तक कि प्रथम अपीलीय अदालत ने भी गलती की जब उसने आपत्तिकर्ता की अपील को खारिज कर दिया। उनका दूसरा तर्क यह था कि आदेश 21, नियम 97, सी.पी.सी. के तहत आपत्तियां दर्ज करने के साथ, रोक आपत्तिकर्ता के पक्ष में स्वचालित थी जब तक कि उसकी आपत्तियों का अंतिम रूप से निपटारा नहीं किया जाता है। डिक्री धारक श्रीमती संतोषी रानी दिनांक 22 जुलाई, 1994 के निष्कासन आदेश पर सफलतापूर्वक मुकदमा नहीं चला

सकी।

(8)यह अदालत इस आदेश के बाद के हिस्से में याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा भेजे गए मामले से निपटेगी। सबसे पहले यह अदालत प्रतिवादियों के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए मुख्य तर्कों को संक्षेप में प्रस्तुत करना चाहती है, जिन्होंने प्रस्तुत किया था कि आपत्तिकर्ता की आपत्तियां उसके द्वारा दायर मुकदमे की विषय-वस्तु थीं और अब आपत्तिकर्ता द्वारा उठाए गए सभी दलीलें मुकदमे

में ही उठाई गई थीं। उस मामले पर अधिकार क्षेत्र के सक्षम न्यायालय द्वारा स्वतंत्र रूप से विचार किया गया है और अंततः प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा यह पाया गया था कि आपत्तिकर्ता को निर्णय देनदार सुनील कुमार द्वारा दुकान में शामिल किया गया था और उसे बाहर निकाला जा सकता है। आपत्तिकर्ता की याचिका पर उच्च न्यायालय द्वारा भी विचार किया गया, जो इस निष्कर्ष पर भी पहुंचा कि सुनील कुमार और सोम प्रकाश एक-दूसरे के साथ हाथ मिला रहे थे ताकि श्रीमती संतोष रानी के पक्ष में निष्कासन आदेश को उचित तरीके से निष्पादित न किया जा सके। यह निष्कर्ष आपत्तिकर्ता के खिलाफ गया है कि वह 1980 के बाद से 'मृत परिसर का किरायेदार नहीं था और इसलिए, निष्पादन न्यायालय द्वारा आगे किसी निर्णय की आवश्यकता नहीं थी, जिसने इन सभी कारकों को ध्यान में रखा था और फिर आपत्तियों को खारिज कर दिया था और डिक्री-धारक के आवेदन को अनुमति दी थी। इसके अलावा प्रथम अपीलीय न्यायालय मामले के सभी पहलुओं पर भी विचार किया और उन दस्तावेजों की भी जांच की जो आपत्तिकर्ता द्वारा पेश किए जा सकते थे और फिर यह निष्कर्ष निकाला गया कि आपत्तिकर्ता के पास कोई मामला नहीं था। इस तरह से इस संशोधन में कोई बल नहीं है जिसे खारिज कर दिया जाना चाहिए क्योंकि आपत्तिकर्ता के इरादे ईमानदार नहीं हैं, जो 22 जुलाई, 1994 के निष्कासन आदेश को विफल करने पर आमादा है, जिसे एक गर्म प्रतियोगिता के बाद डिक्री धारक द्वारा प्राप्त किया गया था। निष्कासन का उक्त आदेश असंगत नहीं था, बल्कि इसे निष्कासन आवेदन दाखिल करने के चार साल बाद प्राप्त किया गया है। प्रतिवादी नंबर 1 श्रीमती संतोष रानी की ओर से पेश वकील के अनुसार, सुनील कुमार (प्रतिवादी नंबर 2) निर्णय

देनदार के पास कोई मामला नहीं था। इसलिए, उसने जानबूझकर सोम प्रकाश को दुकान में शामिल किया। ऑब्जेक्टर का कब्जा कमोबेश एक ट्रेसपेसर का है और उसे मूल निर्णय देनदार के साथ जाना चाहिए। इसके अलावा प्रतिवादी नंबर 1 की ओर से पेश वकील द्वारा यह दलील दी गई थी कि डिक्री धारक एक वैध निष्कासन आदेश के निष्पादन में कब्जा ले रहा है, जो अवैध प्रवेश के बराबर नहीं है और इसलिए, पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया जाना चाहिए।

(9) पक्षकारों की प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर विचार करने के बाद, इस अदालत ने माना कि यह पुनरीक्षण याचिका बिना किसी मेरिट के है। आदेश 21, नियम 97 और 98, सी.पी.सी., निम्नानुसार निर्धारित किया गया है: –

"97. अचल संपत्ति के कब्जे का प्रतिरोध या बाधा-

अचल संपत्ति के कब्जे के लिए डिक्री के धारक या डिक्री के निष्पादन में बेची गई ऐसी किसी संपत्ति के खरीदार द्वारा संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने में किसी भी व्यक्ति द्वारा विरोध किया जाता है या बाधा उत्पन्न की जाती है, तो वह इस तरह के प्रतिरोध या बाधा की शिकायत करते हुए अदालत में आवेदन कर सकता है।

(2) जहां उपनियम (1) के अधीन कोई आवेदन किया जाता है वहां न्यायालय आवेदन पर उसमें अंतर्विष्ट उपबंध के अनुसार निर्णय करने के लिए अग्रसर होगा।

"निर्णय के बाद आदेश। - (1) नियम 101 को निर्दिष्ट प्रश्न के निर्धारण पर, न्यायालय, ऐसे निर्धारण के अनुसार और उपनियम (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए-(क) आवेदन को अनुमति देने और यह निदेश देने का आदेश देगा कि आवेदक को संपत्ति के कब्जे में रखा जाए या आवेदन को खारिज किया जाए; या (ख) ऐसा अन्य आदेश पारित करेगा जो मामले की परिस्थितियों में वह उचित समझे।

2 . जहां, ऐसे निर्धारण पर, न्यायालय का समाधान हो जाता है कि विरोध या बाधा निर्णय देनदार द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसके उकसावे पर या उसकी ओर से, या किसी अंतरिती द्वारा, जहां ऐसा अंतरण वाद या निष्पादन कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान किया गया था, बिना किसी न्यायसंगत कारण के किया गया था, तो यह निर्देश देगा कि आवेदक को संपत्ति के कब्जे में रखा जाए, और जहां आवेदक अभी भी विरोध

~~करता है या कब्जा प्राप्त करने में बाधा डालता है, तो न्यायालय, आवेदक के आग्रह~~ पर निर्णय-देनदार, या उसके उकसावे पर या उसके कहने पर कार्य करने वाले किसी व्यक्ति को सिविल जेल में तीस दिनों तक की अवधि के लिए हिरासत में रखने का आदेश भी दे सकता है।

उपर्युक्त प्रावधानों के अवलोकन से पता चलता है कि कानून ने आपत्तियां प्राप्त होने पर निष्पादन न्यायालय को यह अधिदेश दिया है कि वह ऐसी आपत्तियों पर निर्णय लेने और विवाद के निर्धारण पर निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ेगा।

उचित आदेश पारित करें। *शुभेंदु गुप्ता* बनाम *कलकत्ता व्यापार प्रतिष्ठान लिमिटेड*, (1) में यह निर्धारित किया गया है कि आदेश 21, नियम, 58, 97, 99 और 101 के उपबंधों की भाषा में संशोधन के पश्चात् निष्पादन न्यायालय का यह दायित्व है कि वह प्रत्येक प्रश्न की सुनवाई करे और निर्णय करे कि क्या आपत्तियां उठाने वाला व्यक्ति उस कार्यवाही का पक्षकार था या नहीं, जिसके परिणामस्वरूप डिक्री निष्पादित की जा रही थी। एक व्यक्ति जो किसी डिक्री के निष्पादन में बाधा डालता है, उसे सुनवाई का अधिकार है और इस प्रकार कार्यवाही के पक्षकारों की श्रेणी में आता है। एक आवेदन पर पारित आदेश जिस पर निर्णय लिया गया है, वह एक डिक्री अपील योग्य है। एक बार यह प्रक्रिया अपनाने के बाद, उपचार के लिए एक नियमित मुकदमा दायर नहीं किया जा सकता है। इसलिए, साक्ष्य पर विचार करने के बाद इस प्रश्न पर निर्णय लिया जाना चाहिए। विद्वान वकील ने इस निर्णय के पैरा नंबर 5 की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया है और प्रस्तुत किया है कि निर्णय की प्रक्रिया में आवश्यक रूप से साक्ष्य, मौखिक और दस्तावेजी प्रस्तुत करना और न्यायालय द्वारा उस पर विचार करना शामिल है। चूंकि निष्पादन न्यायालय ने उन सबूतों को ध्यान में रखने के लिए मुद्दों को तैयार नहीं किया था जो आपत्तिकर्ता के नेतृत्व में होने थे; बल्कि इसने आपत्तियों को संक्षिप्त तरीके से निपटाया था, इसलिए, निष्पादन अदालत के साथ-साथ प्रथम अपीलीय अदालत के आदेश कानून की नजर में टिकाऊ नहीं थे। याचिकाकर्ता के वकील ने *नूरदुद्दन बनाम डॉ. के. एल. आनंद (* 2) पर भी भरोसा किया और प्रस्तुत किया कि आपत्तिकर्ता की आपत्तियों पर आपत्तियों पर विचार करने के बाद फैसला किया जाना था और निष्पादन अदालत ने अदालत के पहले के आदेश के आधार पर उन आपत्तियों का फैसला किया, जिसमें आपत्तिकर्ता न तो एक पक्ष था और न ही वह उन आदेशों से बाध्य था। इसलिए, लागू आदेशों को कानून की नजर में बनाए नहीं रखा जा सकता है। उन्होंने फैसले के पैरा नंबर 9 की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया और प्रस्तुत किया कि फांसी से पहले निर्णय धोखाधड़ी, उत्पीड़न, अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग या न्याय के गर्भपात को रोकने के लिए एक प्रभावी उपाय है। वह विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि कानून का उद्देश्य न्याय को पूरा करना था। अचल संपत्ति में किसी पक्ष के अधिकार, स्वामित्व या हित का अधिकार एक अनिवार्य अधिकार है, जिसे केवल अधिनिर्णय के माध्यम से निर्धारित किया जा सकता है। यदि उनके मुवक्किल को साक्ष्य का नेतृत्व करने की अनुमति नहीं दी जाती है, तो कानून की प्रभावकारिता में लोगों का विश्वास कम हो जाएगा, जो कानून के शासन के निर्वाह के लिए उद्धारकर्ता और सहायता है। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि निर्णय लंबित होने तक उनके मुवक्किल के कब्जे को एक अंतरिम आदेश द्वारा संरक्षित करने की आवश्यकता है, जिसे नीचे की अदालतों द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

(10)याचिकाकर्ता के वकील द्वारा उठाया गया कथन पहली बार आश्वासन देने वाला लग सकता है, लेकिन इस अदालत की गहन जांच पर, हमने इसे बिना किसी आधार के पाया है। एक व्यक्ति, जो इक्विटी के आकार में रहना चाहता है, उसे इक्विटी भी करनी

चाहिए। निर्णय क्या है, यह आवश्यक रूप से एक प्रश्न है जो मामले-दर-मामले पर निर्भर करता है। मैंने पहले ही ऊपर कहा है कि आपत्तिकर्ता की पूरी आपत्तियां इस आधार पर आधारित थीं कि उसे श्रीमती संतोष रानी द्वारा संपत्ति की खरीद से बहुत पहले 1980 से दुकान में किरायेदार के रूप में शामिल किया गया था, जिन्होंने वर्ष 1989 में यह संपत्ति खरीदी थी। 1980 से उसका कब्जा जारी था और सुनील कुमार को श्रीमती संतोष रानी द्वारा रखा गया था और उसने उसके खिलाफ निष्कासन का फरमान प्राप्त किया था। आपत्तिकर्ता के इस रुख पर सिविल कोर्ट द्वारा उचित रूप से निर्णय लिया गया है और उस पर विचार किया गया है और उसकी सराहना की गई है, जिसे स्थगन आदेश देने से पहले प्रथम दृष्टया मामला देखना था। निष्पादन न्यायालय की ओर से आगे क्या निर्णय लेने की आवश्यकता थी, जो आपत्तिकर्ता द्वारा दायर एक अलग मुकदमे में सिविल कोर्ट द्वारा पारित कानूनी आदेशों को रद्द नहीं कर सकता था। इतना ही नहीं, आपत्तिकर्ता की आपत्तियों को उच्च न्यायालय तक सही माना गया, जिसे इसमें कोई दम नजर नहीं आता, बल्कि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि वर्तमान आपत्तिकर्ता निर्णय देनदार की रचना है और उसे डिक्री-धारक द्वारा प्राप्त 22 जुलाई, 1994 के निष्कासन आदेश के निष्पादन में परिसर को खाली करना होगा। अधिनिर्णय का अर्थ यह नहीं है कि निष्पादन न्यायालय के लिए प्रयास करने के लिए मुद्दों को तैयार करना हमेशा आवश्यक होता है। यदि आपत्तिकर्ता द्वारा अपनी आपत्ति याचिका में उठाई गई याचिकाओं पर निष्पादन न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा *प्रथम दृष्टया* विचार किया गया है, तो मेरी राय में यह दोनों न्यायालयों की ओर से एक उचित विचार है, जिसके लिए वर्तमान आपत्तिकर्ता सोम प्रकाश को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। ऐसा नहीं है कि आपत्तिकर्ता की आपत्तियां सीधे तौर पर थीं, बल्कि सिविल जज (सीनियर डिवीजन), सिरसा द्वारा पारित 9 मई, 1996 का आक्षेपित आदेश इंगित करता है कि आपत्तिकर्ता के सभी संभावित रुखों पर विधिवत विचार किया गया था और उसके बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि आपत्तियों का कोई बल नहीं था। आदेश के पैरा नंबर 5 में, निष्पादन न्यायालय ने उन सभी कारकों को ध्यान में रखा जो 17 जनवरी, 1996 को आपत्तिकर्ता के संशोधन को खारिज करते समय उच्च न्यायालय तक गए थे। निष्पादन न्यायालय ने आपत्तियों को खारिज करने से पहले इस बात पर भी विचार किया कि आपत्तिकर्ता डिक्री-धारक को कुछ भी भुगतान नहीं कर रहा था, लेकिन डिक्री-धारक संतोष रानी के पक्ष में निष्कासन आदेश के विवाद में दुकान के कब्जे का आनंद ले रहा था। आपत्तिकर्ता की इस दलील पर भी विधिवत विचार किया गया कि वह निष्कासन याचिका में पक्षकार नहीं था और निष्पादन न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि आपत्तिकर्ता ने दीवानी मुकदमा दायर करके अपने कब्जे की सुरक्षा के संबंध में अपने उपायों का पहले ही उपयोग कर लिया था और उसके दावे को उच्च न्यायालय तक भी स्वीकार नहीं किया गया था। इसलिए, यह नहीं माना जा सकता था कि उसे नहीं सुना गया था, कि वह तब थाअपने अवैध कब्जे की रक्षा के लिए स्वतंत्र रूप से हकदार हैं। एक नया अध्याय खोलकर, जैसा कि आपत्तिकर्ता द्वारा प्रतिपादित किया गया है, का अर्थ उन सभी वैध आदेशों को रद्द करना होगा जो डिक्री-धारक द्वारा आपत्ति कर्ता द्वारा दायर घोषणा के लिए मुकदमे में प्राप्त

किए गए थे। अपने स्वतंत्र कब्जे के बारे में आपत्तिकर्ता के तर्क पर भी *नोराली बाबुल ठाणेवाले* बनाम *महाराष्ट्र के रूप में रिपोर्ट किए गए प्राधिकरण के आधार पर विचार किया गया था।के.एम.एम. शेट्टी और अन्य* (2) 1990 एच.आर.आर.आर 55, और यह माना गया कि डिक्री धारक उन सभी व्यक्तियों के खिलाफ निष्कासन के लिए डिक्री निष्पादित करने का हकदार था जो संपत्ति के कब्जे में थे। यहां तक कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के आदेश से पता चलता है कि आपत्तिकर्ता उनके सामने कोई भी मामला बनाने में विफल रहा। इन परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता है कि आदेश 21 नियम 97 और 98, सी.पी.सी. डेटा को निष्पादन न्यायालय को उपलब्ध कराया गया था ताकि आपत्तिकर्ता अपने कब्जे की रक्षा कर सके और उचित विचार के बाद डेटा बिना किसी तथ्य के पाया गया था। *शुभेंदु गुप्ता के* मामले (सुप्रा) के रूप में रिपोर्ट किए गए उद्धरण में आपत्तिकर्ता के अधिकार, शीर्षक या हित का निर्धारण किए बिना आपत्तिकर्ता की आपत्तियों को संक्षेप में खारिज कर दिया गया था और इस कारण से उक्त मामले के आदेश को रद्द कर दिया गया था। *नूरुद्दीन* वी में। *डा के एल आनंद* (4), माननीय उच्चतम न्यायालय का आदेश है कि आपत्तिकर्ता की दलीलों पर विचार करने के बाद आपत्तियों पर निर्णय लिया जाना चाहिए। बेशक, निष्कासन आदेश में वर्तमान आपत्तिकर्ता एक पक्ष नहीं था, लेकिन उसके कहने पर मुकदमा निश्चित रूप से इंगित किया गया था। पहले वह पहले अपीलीय अदालत में और फिर उच्च न्यायालय में हार गए। सफल डिक्री धारक के खिलाफ उच्च न्यायालय में लड़ाई हारने के बाद अब उन आपत्तियों का आश्रय लिया गया है, जिन पर पहले की मुकदमेबाजी की श्रृंखला के आलोक में आपत्तियों पर विचार किया गया है और खारिज कर दिया गया है। वर्तमान मामले में वर्तमान आपत्तिकर्ता को संपत्ति में कोई स्वतंत्र अधिकार नहीं मिलता है।वह अपनी किरायेदारी दिखाने में विफल रहे और इन परिस्थितियों में न्यायिक निर्णय लंबित होने तक उनके अवैध कब्जे को कोई अंतरिम आदेश पारित करके संरक्षित नहीं किया जा सकता था। वकील श्री मोहनता ने राम *चंद्र वर्मा* बनाम *सुप्रीम कोर्ट की रिपोर्ट पर भी भरोसा किया।श्री जगत सिंह सिंघी और अन्य* (5), जो प्राधिकारी हाथ में मौजूद तथ्यों पर लागू नहीं होता है। इस उद्धृत मामले में आपत्तिकर्ता ने निष्पादन न्यायालय को सफलतापूर्वक अपना कानूनी कब्जा दिखाया, जिसेफैसले की ओर से लाइसेंस के रूप में पेश किया गया था न्यायालय की वह व्याख्या अवैध थी और इस कारण से आपत्तिकर्ता के कब्जे की रक्षा की गई थी। यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि किसी भी समय आपत्तिकर्ता ने कथित आरोपों के समर्थन में निष्कासन कार्यवाही में एक पक्ष बनने का प्रयास नहीं किया कि वह 1980 से अपनी किरायेदारी का दावा कर रहा था।

(11)उपर्युक्त चर्चा को सारांशित करते हुए, मैं मानता हूं कि आदेश 21, नियम 97 और 98, सी.पी.सी. के तहत प्रयुक्त 'अधिनिर्णयन' शब्द मुद्दों के निर्धारण के साथ शुरू और समाप्त नहीं होता है, बल्कि इसके लिए आपत्तिकर्ता के मामले और ऐसी आपत्तियों के समर्थन में दस्तावेजों की सराहना की आवश्यकता होती है। वर्तमान मामले में निष्पादन

न्यायालय ने आपत्तियों के साथ-साथ विभिन्न आदेशों पर अपना दिमाग लगाया जो अंतर-पक्षकारों द्वारा पारित किए गए थे और फिर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि आपत्तिकर्ता की आपत्तियों का कोई बल नहीं था और वह मूल किरायेदार सुनील कुमार द्वारा शामिल किए गए व्यक्ति होने के नाते निष्कासन आदेश के अनुसरण में कब्जा देने के लिए बाध्य था।

(12)नतीजतन, इस अदालत को इस पुनरीक्षण याचिका में कोई मेरिट नहीं मिलती है और इसे खारिज किया जाता है, जिससे पार्टियों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

अवीषेक गर्ग
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
हिसार, हरियाणा